Musical Instruments of India

Percussion

or

Rhythm Instruments

Late "Tabla Samrat" Shamta Prasad (Gudai Maharaj) of Varanasi

भारत के वाद्य यंत्र

तालवाद्य

Musical Instruments of India
Percussion or Rhythm Instruments

Percussion instruments are divided into two categories:-

1. *Avanaddha* or *Membranophones.*
2. *Ghanavadyas or Idiophones.*

The first variety is known thus because they are covered with membranes or skins of animals or leather. They can give out definite well-modulated sounds. Some are covered on one side, while others are covered with leather on both sides.

The second variety produces just *"struck sounds"* for rhythmic beats.

Drums have existed all over the world from earliest times when they were used almost exclusively for ceremonial and ritualistic observances. Vedic literature describes *"Bhoomi Dundhubi"* (earthdrum), a huge pot fixed in the ground and covered with ox-hide. *"Atharwaveda"* contains a description of a *dundubhi* (huge drum) covered with deerskin. Drums can be made of wood, clay, metals, mud etc. To the Hindu mind, several of these instruments have esoteric, mythological, and sacred associations. For instance; *"Damaru"* is the instrument of Shiva, the Cosmic Dancer. *"Natyashastra"* gives details of how the *Mridanga* should be worshipped.-Manipuri dancers consider their *Pungs* (special drums) as sacred, and *Srikhols* accompany *Keertan* and *Sankeertan* group singers of devotional songs composed by saintly poets. *Pungs, Srikhols and Dhols* used for Puja in Bengal, *Dholaks* played by ladies in marriages, the *Tavil* that accompanies Nagaswaram, the *Duggad* which accompanies Shahnai, the *Damaru* of Tibet (used in religious ceremonies), the *Mridangam* used in classical Karnatic music, the *Pakhawaj* used for *Dhruvpad* and for accompanying Odissi dance, the *Edakka* used for Mohiniyattam dance and in the temples of the

South, the *Naqqara* of Nautanki, the *Kanjira* used in Karnatic concerts and the *Daphli* or *Duff* are but a few instances of *Avanaddha vadyas.*

The Moghul emperors and other rulers used to have a *Naubatkhana* or *Naqqarkhana--* an apartment specially kept in the tower of a castle or the gate-way of palaces. In these, were kept large ensembles of instruments to announce various daily routines, activities and pleasures of royalty. It is recorded that Emperor Akbar's Naubatkhana had "a band of 42 drums". The Calcutta Museum has 287 different varieties of drums.

Cymbals, Bells, Gongs are examples of the merely *struck* or *ghanavadyas* used for simple rhythmic accompaniment.

Traditionally, drums in general were known as "PUSHKARAS" because it was the pattering sounds of rain-drops falling on *Pushkara* (Lotus) leaves that inspired the *Saint Svāti* to try out many types of drums. Drums on which "tuned" or modulated sounds can be produced are the numerous *"avanaddhavadyas"* and today many of these have become so developed and refined that they have won great appreciation from concert platforms all over the world. Many *"Mridangam" Vidwans* from the South, and great Tabla virtuosi from the North have become world celebrities as soloists and accompanists both.

The *Pakhawaj* is regarded as the "King of percussion instruments in Hindustani music" as it is the only rhythmic accompaniment for Dhruvpad-Dhamar, Veena etc, and for Odissi dances. The two main "schools" of Pakhawaj playing are named after two great Gurus:- "Kudau Singh gharana", and "Nana Panse gharana" of U.P. and Rajasthan Respectively.

The *"Chenda"* and *"Maddalam"* (huge drums) used for Kathakali, *Tasha, Bheri, Pataha, Khol, Naal, Duff* are all *Avanaddha vadyas.*

The most popular percussion instrument used for North Indian music is the *Tabla-Baayan* pair. There are many mutually

conflicting stories about the origins of the tabla. Many people believe that this pair was created by a frustrated Pakhawaj player who broke the Pakhawaj into two, put them upright and began to play on them. The word "TABLA" is from Persian but the instrument is said to be of indigenous origin though its name was Persianised. The right drum is struck with the ends and middle "phalanges" of the fingers as well as the flat palm. The left hand drum or Baayan is larger and played with the flat and base of the palm, and tips of the fingers are used. By varying pressures, beautifully resounding modulated sounds are produced on the *Baayaan*. There are different styles or schools of Tabla art, the important schools or "gharaanas" being DILLI, AJRADA, FARUQQABAD, LUCKNOW, BENARES and PUNJAB. Each gharana has produced a large number of great and famous exponents who have, in their turn, groomed numerous young and accomplished exponents so that today there are countless young well-trained tabla experts all over North India, Maharashtra, Bengal, and even in foreign countries like U.K.Europe, and U.S.A. The tabla has become extremely popular in south India which is the stronghold of the Mridangam. Today, not only Tabla-Mridangam duets, but ensembles of percussion instruments known as TALA-VADYA-KATCHERIS have become widely popular all over the country. Even percussion groups of Indian and Western instruments have been tried and won wide populcrity. The Mridangam of the South and the Tabla and Pakhawaj of the North have produced such a large number of legendary experts that it will not be fair to give a partial list. Today so many of India's percussion-virtuosi are enjoying unprecedented popularity all over the world. Ustad Zakir Hussain has been leading many East-West percussion and rhythm instrumental *ensembles* recently.

Susheela Misra

Pdt. Kishan Maharaj "Tabla Samrat"
of Varanasi

भारत के वाद्य यंत्र

तालवाद्य

तालवाद्यों को दो वर्गों में विभाजित किया जाता है :

१. अवनद्ध वाद्य

२. घन वाद्य

प्रथम वर्ग के वाद्यों को अवनद्ध इसलिये कहा जाता है कि वे पशुओं की झिल्ली, खाल या चमड़े से ढके होते हैं। इन वाद्यों से सुनिश्चित तथा सुनियमित ध्वनि उत्पन्न होती है। कुछ वाद्य एक ओर, तथा कुछ दोनों ओर, चमड़े से मढ़े होते हैं।

द्वितीय वर्ग के वाद्य आहत ध्वनियों द्वारा ताल की आवृत्ति करते हैं। कई प्रकार के ढोल पूरे विश्व में आदि काल से प्रयुक्त होते आ रहे हैं। सर्वप्रथम उनका एक मात्र प्रयोग औपचारिक या धार्मिक अनुष्ठान के अवसरों पर ही होता था। वैदिक साहित्य में 'भूमि दुंदुभि' का उल्लेख मिलता है। यह वाद्य एक विशाल काय पात्र के रूप में होता था जिसे बैल की खाल से मढ़कर ज़मीन में मज़बूती से धँसा दिया जाता था। ''अथर्ववेद'' में हरिण की खाल से टके दुदुभि (विशाल नगाड़े) की चर्चा मिलती है। ढोल लकड़ी चिकनी मिट्टी, धातु व सामान्य मिट्टी से बनाये जा सकते हैं। हिन्दू-मानस में इन वाद्यों में से कई वाद्य गूढ़, रहस्यात्मक, पौराणिक एवं पुनीत संदर्भों से जुड़े हैं। ब्रह्माण्ड के नर्तक शिव का वाद्य डमरू हैं। ''नाट्य शास्त्र'' में मृदंग की पूजा विधि विस्तार से वर्णित है। मणिपुरी नर्तक अपने पुंग (विशेष प्रकार के ढोल) को पवित्र मानते हैं। 'श्रीखोल'' पर संकीर्तन मंडलियां संत कवियों के भजन गाती हैं। बंगाल में पूजा के अवसर पर बजाये जाने वाले पुंग, श्रीखोल, ढोल, वैवाहिक अवसरों पर महिलाओं द्वारा बजाई जाने वाली ढोलक, नागस्वरम के साथ बजाई जाने वाली तविल, शहनाई का संगत वाद्य डुग्गड़, धार्मिक अवसरों पर बजाये जाने वाले तिब्बत के डमरू, शास्त्रीय संगीत में प्रयुक्त होने वाला मृदंग, ध्रुवपद तथा उड़ीसी नृत्य में प्रयोग होने वाला पखावज, मोहिनियाट्टम नृत्य के साथ संगत करने वाला इड़क्का, नौटंकी का नक्कारा, कर्नाटक संगीत गोष्ठियों में बजाये जाने वाला कंजीरा, ढफली, ढफ

आदि अवनद्ध वाद्य के कुछ उदाहरण हैं। मुगल बादशाहों तथा अन्य शासकों का अपना एक **''नौबतखाना''** या **''नक्कारखाना** होता था। यह किलों की मीनार में या महलों के प्रवेश द्वार में एक कमरे के रूप में होता था। उसमें अनेक वाद्यों का संग्रह होता था। इन वाद्यों के द्वारा शाही परिवार की दिनचर्या के विभिन्न कार्यकलाप और उनके मनोरंजन के कार्यक्रम उद्घोषित किये जाते थे। इतिहास में इसका उल्लेख है कि अकबर् बादशाह के नक्कार खाने में ४२ ढोलों का मिलाजुला संग्रह था। कलकत्ता म्यूज़ियम में विभिन्न प्रकार के २८७ ढोलों का संग्रह है।

मंजीरा, घंटियां, घड़ियाल घन वाद्यों के उदाहरण हैं। आहत ध्वनि द्वारा सरल सामान्य ताल देने के लिये इनका प्रयोग होता है।

पारम्परिक रूप से ढोलों का सामान्य नाम ''पुष्कर'' है। इसके पीछे कथा यह है कि वर्षा की बूँदों के ''पुष्कर'' (कमल) दल पर पड़ने से उत्पन्न ध्वनि से संत स्वाति को विभिन्न प्रकार के ढोलों के निर्माण की प्रेरणा मिली थी।

वे ढोल जिनके द्वारा समस्वरित तालबद्ध ध्वनियाँ उत्पन्न की जा सकती हैं ''अवनद्ध वाद्य'' के उदाहरण है। आज इन वाद्यों को इस सीमा तक विकसित व परिष्कृत किया जा चुका है कि पूरे विश्व के संगीत समारोहों में उनकी भरपूर सराहना होती है। दक्षिण के अनेकों मृदंग विद्वान तथा उत्तर के महान तबला वादक एकल या संगत कलाकार के रूप में व्यापक ख्याति अर्जित कर चुके हैं।

हिन्दुस्तानी संगीत के तालवाद्यों में पखावज को ''सम्राट'' माना जाता है। यही एक मात्र वाद्य है जो ध्रुवपद-धमार, वीणा तथा ओडीसी नृत्य में ताल पद संगत के लिए प्रयुक्त होता है। पखावज के दो प्रमुख घरानों के नाम उनके महान गुरूओं के नाम पर रखा गया है - उत्तर प्रदेश का 'कुदऊ सिंह घरांना' तथा राजस्थान का 'नाना पॉसे घराना ' ।

कथकली में प्रयुक्त होने वाले चैंण्डा और मद्दलम (विशाल काय ढोल), तथा ताशा, भेरी, पटहा, खोल, नाल, डफ आदि वाद्यों की गणना अवनद्ध वर्ग में ही होती है।

उत्तर भारत में सबसे लोकप्रिय ताल वाद्य है तबला और बायाँ की जोड़ी। तबले के जन्म के संबंध में परस्पर विरोधी कई कथायें प्रचलित हैं।

बहुतों के अनुसार तबले की शुरूआत तब हुई जब किसी उग्रहृदय पखावजी ने अपने पखावज को तोड़कर उसके दो हिस्से कर दिये फिर बाद में उन्हीं को सीधे रखकर बजाने लगा। 'तबला' शब्द फारसी है- पर नाम फारसी होते हुए भी तबला देशज वाद्य है।

तबले के दाहिने ढोल को उँगलियों के सिरे, मध्य उँगलियों के अस्थिभाग तथा समतल हथेली से बजाया जाता है। **"बाये"** (बाई ओर वाला ढोल) का आकार बड़ा होता है और उसे हथेली के समतल भाग उसके मूल, और उँगलियों के सिरे से बजाया जाता है। **"बायें"** पर थाप के दबाव में परिवर्तन के द्वारा बड़ी सुन्दर श्रुति मधुर अनुगूँज उत्पन्न की जाती है।

तबला वादन की विभिन्न शैलियाँ या "घराने" हैं। महत्वपूर्ण घरानों में "दिल्ली", "अजराड़ा," **"फर्रूखाबाद", "लखनऊ", "बनारस"** और **"पंजाब"** की गणना होती है। प्रत्येक घराने ने अनेकों महान प्रसिद्ध प्रतिनिधि-कलाकारों को जन्म दिया है और इन कलाकारों ने स्वयं बहुत से युवा कुशल कलाकारों कों प्रशिक्षित और तैयार किया है। फलस्वरूप आज असंख्य प्रशिक्षित युवा तबला वादक सारे उत्तर भारत, महाराष्ट्र व बंगाल में विद्यमान हैं- यही नहीं, यू.के., यूरोप के अन्य देशों तथा संयुक्त राष्ट्र अमरीका में भी कुशल तबला-वादक मिल जायेंगे।

यद्यपि दक्षिण भारत "मृदंग" का गढ़ है फिर भी वहाँ तबला अत्यधिक लोक-प्रिय हो रहा है। आज तबला-मृदंग की जुगल बंदी ही नहीं हो रही, विभिन्न ताल वाद्यों की मिली जुली प्रस्तुति भी पूरे देश में व्यापक लोकप्रियता प्राप्त कर रही है- इस प्रकार की प्रस्तुति को **"ताल-वाद्य-कचहरी"** कच्चेरी का नाम दिया गया है। यही नहीं भारतीय तथा पाश्चात्य देशों के ताल-वाद्यों की मिश्रित प्रस्तुतियों को भी आजमाया जा रहा है और इन्हें खासी लोकप्रियता मिल रही है। प्रायः इस प्रकार के मिश्रित वाद्य वृन्दों का संचालन उस्ताद ज़ाकिर हुसेन करते हैं जो तबले के अति लोकप्रिय सितारे हैं।

छाया चित्र : **राकेश सिन्हा** **सुशीला मिश्रा**

हिन्दी अनुवाद : **ओम प्रकाश दीक्षित**

निदेशक संस्कृति विभाग उ.प्र. के लिये निदेशक भारतेन्दु नाट्य अकादमी ए-2/58,गोमतीनगर लखनऊ द्वारा प्रकाशित एवम् शिवम आर्ट्स 211, निशातगंज, लखनऊ दूरभाष - 386389 द्वारा मुद्रित।